औषधीय एवं जैव क्रियाओं में कीलेटीकरण की भूमिका

विजय शंकर
असिस्टेंट प्रोफेसर, रसायन विज्ञान विभाग
बी0 एस0 एन0 वी0 पी0 जी0 कॉलेज, लखनऊ(उ0 प्र0)–226001, भारत
rao.vijay55@gmail.com

सार

धातुओं के कीलेट यौगिकों में फंगस निरोधी, जीवाणु एवं विषाणु निरोधी क्रियाएं होती हैं। ट्रिस कीलेट आवेष के घटने से लिपिड की विलेयता बढ़ जाती है, सक्रिय कीलेट कोशिकाओं की उपचयन–अपचयन अभिक्रियाओं को प्रभावित करती है जैसे– 2–मरकैप्टोपिरीडीन–N–ऑक्साइड, डाइमेथिल इाडथायो कार्बेमिक अम्ल, फंगस एवं बैक्टिीरिया निरोधी होती है, कापर आयनों के कीलेट द्वारा विशेष रूप से प्रभावकारी हो जाती है।

जैविक निकायों में अधिकतर धनायनिक/ऋणायनिक कीलेटों के संकर मुख्य रूप से आयरन, निकेल, कोबाल्ट, जिंक, रूथेनियम तथा ऑस्मियम की कीलेट जैविक कलाओं का अतर्वेधन अधिक कर देते हैं और कीलेटीकरण के द्वारा आवेश की आयतन में वृद्धि हो जाती है जिससे स्थिर वैद्युत आकर्षण बल के साथ–साथ शक्तिशाली वाण्डरवाल बल अथवा अधिशोषण के द्वारा दृढ़ रूप से बंधित हो जाते हैं जिससे पादपों में भी धातु आयनों की न्यूनता या रोगों के उपचार में ईडीटीए तथा पालीएमीनो–कार्बोक्सिलिक अम्लों के साथ धातुओं के कीलेटों का उपयोग औषधीय एवं जैविक क्रियाओं की सक्रिय भूमिका के रूप में किया जाता है।

Role of chelation in medicinal and biological functions

Vijay Shankar
Assistant Professor, Department of Chemistry
B.S.N.V. P.G. College, Lucknow(U.P.)-226001, India
rao.vijay55@gmail.com

Abstract

Chelate compounds of different metals (such as Iron, Nickel, Cobalt, Zinc, Ruthenium and Osmium) have antifungal, antibacterial and antiviral properties. Lipid solubility increases with decreasing charge of tris-chelate, the active chelates also affects the redox reaction in different cells, such as 2-mercaptopyridine N-oxide, dimethyl dithiocorbamic acid are the active chelates which functions as antibacterial and antifungal agents, copper chelates of such legands are more effective. The metal chelates have a curative role for plants as well as for animals as they can be used for the treatment of metal deficiencies as well as toxicity in plants and animals.

धातुओं के कीलेट यौगिकों की औषधीय एवं जैव निकायों में एक महत्वपूर्ण भूमिका होती है। औषधियों में प्रयुक्त अनेक रसायनों की संरचना इस प्रकार की होती है कि वे धातु आयनों से कीलेट यौगिक बना सकते हैं। इसका अनुमान किया जा सकता है कि इन रसायनों की औषधीय क्रिया कीलेट निर्माण पर निर्भर है। यद्यपि अनेक उदाहरणों में वास्तविक कार्य तथा कार्यवाही के स्थान का ठीक–ठीक ज्ञान नहीं है। परन्तु ऐसा अनुमान है कि वह जैव निकायों में उपस्थित धातु आयनों को बन्धित कर लेता है।

एल्बर्ट[1–3] ने अपने विशद अध्ययनों द्वारा यह प्रदर्शित किया है कि 8–हाइड्रॉक्सीक्विनोलीन (I) की फंगस निरोधी तथा बैक्टिरियानिरोधी क्रिया एक धातु कीलेट यौगिक के निर्माण द्वारा होती है। बहुधा यह देखा गया है कि 8–हाइड्रॉक्सीक्विनोलीन तथा आयरन (III) दोनों की बैक्टिरियानिरोधी सान्द्रता का कोई प्रभाव नही होता, परन्तु 1:1 के मोलर अनुपात में एक साथ वे प्रबल बैक्टिरियानाशक हैं। इसके अतिरिक्त केवल 1,8 समावयवी ही प्रभावकारी है। तथा इसके O तथा N के मेथिलीकरण द्वारा बैक्टिरियानिरोधी क्रिया नष्ट हो जाती है। इस प्रकार इसमें कोई सन्देह नहीं कि वस्तुतः कीलेट ही बैक्टिरिया निरोधी है।

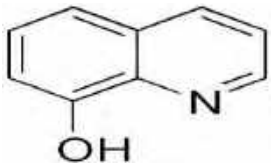

(I) 8– हाइड्रॉक्सीक्विनोलीन

आयरन (III), 8–हाइड्रॉक्सीक्विनोलीन से मोनो, बिस तथा ट्रिस कीलेट यौगिक वना सकता है। इनमें से मोनो तथा बिस कीलेट धनायनिक होंगे और उन पर क्रमशः 2, तथा 1 धन आवेश होगा जब कि ट्रिस कीलेट आवेश रहित विद्युत अनपघट्य होगा। चूँकि आवेश के घटने से लिपिड–विलेयता बढ़ जाती है। अतः कोशिका में प्रवेश पाना भी अधिक सरल हो जाता है। एल्बर्ट इस आधार पर एक निष्कर्ष पर पहुंचे कि इन कीलेटों में से 1:1 तथा 1:2 कीलेट विषालु हैं, परन्तु वे कोशिका में प्रवेश नही कर पाते, जबकि 1:3 कीलेट कोशिका में प्रवेश तो सरलता से कर लेता है, परन्तु वह विषालु नहीं है। एल्बर्ट का विचार है कि आयरन (III) 8–हाइड्रॉक्सीक्विनोलीन निकाय का कार्य मुख्य रूप से कोशिका कला से होकर कोशिका के भीतर इन रासायनिक घटकों का प्रवेश करा देना है, जहाँ ये वियोजित हो जाते हैं, तथा मुक्त 8–हाइड्रॉक्सीक्विनोलीन, अथवा आयरन (III) आयन या इनसे तथा कोशिका के जैव पदार्थों से निर्मित कोई अन्य यौगिक विष का कार्य करते हैं। सक्रिय कीलेट, कोशिका के भीतर उसकी उपचयन–अपचयन की अभिक्रियाओं को भी प्रभावित कर सकता है अथवा मोनो तथा बिस कीलेट केन्द्रीय धातु आयन के रिक्त उपसहसंयोजन के स्थानों पर एन्जाइमिक कीलेटकारियों से बन्ध बना सकते हैं। इसी प्रकार 2–मरकैप्टोपिरीडीन–N–ऑक्साइड, डाइमेथिल डाइथायो कार्बेमिक अम्ल जैसे अनेक फंगस तथा बैक्टिरिया निरोधी औषधियों की क्रिया धातु आयनों द्वारा अधिक सक्रिय एंव प्रभावकारी हो जाती है। डाइमेथिल डाइथायोकार्बेमिक अम्ल की क्रिया कॉपर आयनों के द्वारा विशेष रूप से प्रभावकारी हो जाती है। अनुमान है कि इसका मोनो कीलेट विषालु है तथा फंगस की कोशिका में बिस कीलेट के रूप में प्रवेश होता है।

आइसोनिकोटिनिक एसिड हाइड्रेजाइड (II) का उपयोग यक्ष्मा रोग के उपचार में किया जाता है। यह एक एमिनोअम्ल के ही समान कीलेटकारी यौगिक है तथा इसकी यक्ष्मानिरोधी क्रिया कापर (II) आयन के द्वारा अधिक प्रभावकारी हो जाती है। टेट्रासाइक्लीन[4] में भी अनेक उपयुक्त दाता आक्सीजन परमाणु होते है और यह भी काफी स्थायी कीलेट बनाता है।

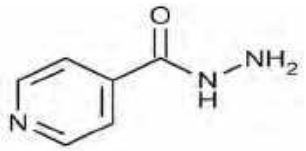

(II) आइसोनिकोटिनिक एसिड हाइड्रेजाइड

सैलिसिलिक अम्ल तथा इसके व्युत्पन्न यौगिक प्रख्यात ज्वरनाशक औषधि है। ऐसा सुझाव दिया गया है कि इनकी क्रिया कीलेट निर्माण के द्वारा होती है। सूवर्ट[5] का विचार है कि सैलिसिलेट, आरिन ट्राइकार्बोक्सिलिक अम्ल तथा ऐमिनो पाइरीन की ज्वरनाशक क्रिया का कारण यह है कि इन यौगिकों द्वारा कोशिका द्रव्य का कापर आयन जो ज्वर की दशा में कोशिका के अर्न्तस्थानों से मुक्त हो जाता है, कीलेट के रूप में कोशिका में पुनः प्रवेश कर लेता है। इसका प्रमाण[6] है कि वात के ज्वर में मेटा तथा पैरा हाइड्रॉक्सी बेन्जोइक अम्ल प्रभावकारी नहीं होते, क्योंकि उनमें कीलेट निर्माण की क्षमता नहीं होती, जब कि 2,6 डाइहाइड्रॉक्सी बेन्जोइक अम्ल (γ– रिसार्सिलिक अम्ल) (III) जो स्थायी कीलेट बना सकता है। सैलिसिलिक अम्ल से भी अधिक प्रभावकारी है।

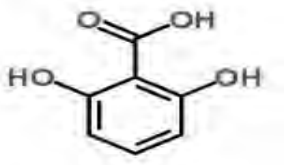

(III) 2,6 डाइ हाइड्राक्सी बेन्जोइक अम्ल

β नैफ्थिलएमीन (IV) स्वयं कैंसर उत्पन्न नहीं करता है परन्तु स्तन धारियों में यह जैव आक्सीकरण के द्वारा α–हाइड्राक्सी β– नैफ्थिलएमीन में परिणत हो जाता है जो कि मूत्राशय में अर्बुद निर्माण के हेतु अति सक्रिय है। इसका कारण सम्भवतः इसके कीलेटकारी गुण में है।

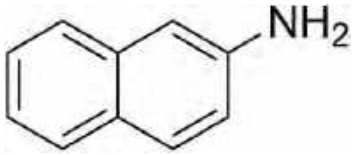

(IV) β नैथिलएमीन

जैव निकायों पर कई वर्षों से सीधे संश्लिष्ट धातु कीलेट संकर यौगिकों के प्रभाव सम्बन्धी अध्ययन भी हो रहे हैं। यह स्पष्ट है कि उप सह संयोजन की दृष्टि से पूर्णतः संतृप्त धात्विक कीलेट यौगिकों में और कोई बन्ध बनाने की क्षमता नहीं होती है। अतः इस बात की आशा की जाती है कि जैव निकायों पर उनका बहुत कम प्रभाव होगा। ऋणायनिक तथा धनायनिक कीलेट संकर यौगिक अधिक मात्रा में किसी जैव निकाय में विद्युत अपघट्य के संतुलन को विक्षुब्ध कर सकते हैं। इस प्रकार धनायनिक कीलेट यौगिक चतुष्क अमोनियम धनायनों की ही भाँति तंत्रिका की पेशियों को प्रभावित कर सकते हैं।

पादपों में आयरन, मैंगनीज, जिंक आदि की न्यूनता के उपचार में ईडीटीए तथा अन्य पालीएमीनो–कार्बोक्सिलिक अम्लों के ऋणायनिक कीलेटों के प्रयोग का वर्णन पहले ही किया जा चुका है। आयरन (III) के कीलेट का अवशोषण पादपों की जड़े करती है और इसी के साथ कुछ मुक्त धातु आयन भी प्रवेश पा जाते हैं। आयरन (III) के कीलेट की प्राप्यता सूर्य के प्रकाश द्वारा बढ़ जाती है, क्योंकि सूर्य के प्रकाश द्वारा इसका आयरन (II) के कीलेट में अपचयन हो जाता है। इस प्रकार मुक्त कीलेटकारी अभिकर्मक पादप की कोशिकाओं में उपस्थित अन्य सूक्ष्ममात्रिक धातु आयनों को बन्धित करके विषालु प्रभाव उत्पन्न कर सकता है। इससे यह स्पष्ट है कि इन कीलेटों का जैव प्रभाव स्वयं इनके द्वारा न होकर इनके वियोजन से उत्पन्न स्पीशीज के द्वारा हो। वृक्क पर ईडीटीए के ऋणायनिक कैल्सियम कीलेट का विषालु प्रभाव स्पष्ट नहीं है।[7] स्थायी विद्युत अनपघट्य कीलेटों के जैव प्रभाव के सम्बन्ध में कुछ विशेष ज्ञात नहीं है। कोच[8] ने अवश्य चूहों में ट्रिस (ग्लाइसिनेटों) कोबाल्ट (III) के इन्जेक्शनों से हाइपर ग्लाइसीमिया उत्पन्न होते पाया है।

जैव निकायों पर अधिकतर धनायनिक संकरों के प्रभावों का अध्ययन किया गया है। इनमें भी मुख्य रूप से आयरन, निकेल, कोबाल्ट, जिंक, रूथेनियम, तथा ऑस्मियम के 2,2′ वाइपिरीडीन (V) तथा 1,10 फेनैन्थ्रोलिन (VI) अथवा उनके व्युत्पन्नों से निर्मित कीलेटों का ही विशेष रूप से अध्ययन किया गया है। इनमें के Ru (II) तथा Os (II) के कीलेट अत्यन्त जड़ होते हैं, अतः वे इस प्रकार के अध्ययनों के लिए बड़े उपयोगी हैं।

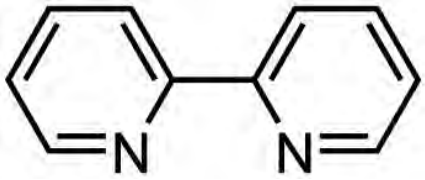

(V) 2,2′ वाइपिरीडीन

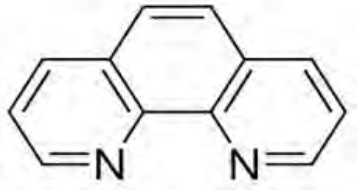

(VI) 1,10 फेनैन्थ्रोलिन

संकर निर्माण में लिगैंड के इलेक्ट्रॉनों के दान के द्वारा केन्द्रीय धातु आयन का धन आवेश घट जाता है। इसके अतिरिक्त पाउलिंग के विद्युत उदासीनता[9] के नियम के अनुसार आवेश केवल धातु आयन पर ही केन्द्रित न रहकर, धातु परमाणु तथा अन्य घटक परमाणुओं की विद्युत ऋणात्मकता के अनुसार पूरे संकर पर वितरित हो जाता है। इस प्रकार कीलेटीकरण के द्वारा आवेश के आयतन में वृद्धि हो जाती है। बाइपिरीडील तथा 1,10 फेनैन्थ्रोलीन लिगैंडों में π बन्धन की भी क्षमता होती है जो कि परिधीय धन आवेश को घटाने में सहायक है। बाइपिरीडिल तथा 1,10 फेनैन्थ्रोलीन में 6,6′ तथा 2,9 स्थानों के अतिरिक्त अन्य किसी भी स्थान पर एल्किल समूहों के प्रतिस्थापन से उनके द्वारा निर्मित कीलेटों का स्थायित्व बढ़ जाता है। इसका एक और लाभ यह भी है कि ऐल्किल प्रतिस्थापन से इनका पृष्ठ क्षेत्र बढ़ जाता है तथा ये कार्बनिक विलायकों में अधिक विलेय हो जाते हैं। अतः इस प्रकार के कीलेट जैविक कलाओं का अन्तर्वेधन सम्भवतः अधिक कर लेते हैं। और स्थिर वैद्युत आकर्षण बल के साथ–साथ अधिक शक्तिशाली वान्डरवॉल बल अथवा अधिशोषण के द्वारा जैविक पृष्ठों पर अधिक दृढ़ रूप से बन्धित हो जाते हैं।

चूहों तथा गिनीपिग के बच्चों पर प्रयोगों के द्वारा ज्ञात हुआ है कि अमोनिया, एथिलीन डाईएमीन, 2,2′ वाइपिरीडीन, 1,10 फेनैन्थ्रोलीन, 2,2′,2′′–ट्राइपिरीडीन आदि लिगैन्डों से निर्मित द्विसंयोजक धातुओं (आयरन, निकेल, कोबाल्ट, जिंक, रूथेनियम, आस्मियम) के संकर इंजेक्शन देने पर शीघ्रता से अवशोषित हो जाते हैं परन्तु इन्हें खिलाने से पाचक तंत्र द्वारा इनका अवशोषण बहुत कम[10] होता है। कीलेट का अधिकांश भाग मल में यथावत निकल जाता है जबकि मूत्र इससे लगभग मुक्त रहता है। परन्तु अस्थायी कीलेटों का अवशोषण, उन दशाओं में सम्भव है यदि उनका वियोजन हो सके। उदाहरणार्थ चूहों को फेरस सल्फेट के साथ ट्रिस (5–नाइट्रो–1,10फेनैन्थ्रोलीन) आयरन (II) सल्फेट कीलेट खिलाने पर इसका काफी अंश उनके मूत्र में पाया गया। इसकी व्याख्या इस प्रकार की जा सकती हैः आयरन (II) का ट्रिस कीलेट सोडियम क्लोराइड की उपस्थिति में एक अनायनित संकर अणु डाइक्लोरो (5–नाइट्रो–1,10 फेनैन्थ्रोलीन) आयरन (II) तथा मुक्त क्षारक 5– नाइट्रो – 1,10 फेनैन्थ्रोलीन में वियोजित हो जाता है।

$$[Fe\ (5\text{-}NO_2\ phen)_3]\ SO_4 \xleftrightarrow{NaCl} [Fe\ (5\text{-}NO_2\ phen)Cl_2]^o + 2(5\text{-}NO_2\ phen) + Na_2\ SO_4$$

यह अनायनित संकर अस्थायी है अतः यह शीघ्रता से वियोजित होकर पुनः ट्रिस कीलेट बना लेता है।

$$3[Fe\ (5\text{-}\ NO_2\ phen)\ Cl_2)]^o \longleftrightarrow [Fe\ (5\text{-}NO_3phen)_3]Cl_2 + 2Fe\ Cl_2$$

उपर्युक्त साम्यावस्था की प्रवृत्ति ट्रिस कीलेट के निर्माण की दिशा में होती है परन्तु फेरस आयनों के आधिक्य की उपस्थिति में इसे अनायनित मोनोकीलेट के निर्माण की दिशा में विवश किया जा सकता है चूंकि अनायनित मोनो कीलेट पर कोई आवेश नहीं होता, अतः आंत्र प्रणाली की श्लेष्माओं द्वारा इसका अवशोषण सरलता से हो जाता है फिर, वहाँ से यह रूधिर में प्रवेश कर जाता है और अंत में इसका मूत्र द्वारा उत्सर्जन हो जाता है।

पेरीटोनियम के नीचे इन्जेक्शन के द्वारा अवशोषित होने के पश्चात $(Ru^{106}(phen)_3]^{++}$ आयन यकृत वृक्क और कभी–कभी मध्यपट, अग्न्याशय, तथा तिल्ली में उच्च सान्द्रता में पाया गया है तथा फुप्फुस, आंत्र, हृदय, शुक्रग्रन्थि, कंकाल पेशी, आँख तथा त्वचा में इसकी सूक्ष्म मात्राएं पाई गई हैं, परन्तु रेडियोधर्मिता के अध्ययनों द्वारा केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र में इसकी उपस्थिति के कोई प्रमाण नहीं मिलते[11]। ट्रिस(2,2′–वाइपिरीडीन) आयरन (II) सल्फेट का भी शरीर में इसी के समान वितरण[12] होता है। कोच[11] ने देखा कि 24 घन्टों में चूहों को $[Ru^{106}(phen)_3]^{++}$ की दी गयी मात्रा का 97–99 प्रतिशत मूत्र में उसी प्रकार अपरिवर्तित होकर निकल आता है। वृक्क तंत्र द्वारा धातु संकरों का उत्सर्जन अतिशीघ्र होता है। यह देखा गया है कि चूहों में 1,10 फेनैन्थ्रोलीन तथा 2,2′ वाइपिरीडीन के आयरन (II) कीलेटों के इन्जेक्शन लगाने के 5–10 मिनटों के भीतर ही ये कीलेट उनके मूत्र में आ जाते हैं।

मस्तिष्क की कोशिकाओं में ग्लूटामिन का संश्लेषण ग्लूटामिन सिन्थेटेस एन्जाइम के द्वारा होता है, जो ग्लूकोस तथा अमोनिया की उपस्थिति में ग्लूटैमेट को ग्लूटामिन में परिणत कर देता है[13]।

इस अभिक्रिया में एडिनोसीन ट्राईफॉस्फेट (एटीपी) की एक उपयुक्त मात्रा की उपस्थिति भी आवश्यक है[14] और इसके अभाव में यह क्रिया नहीं हो पाती और यदि एटीपी का संश्लेषण न हो पाये तो ग्लूटामिन के संश्लेषण का भी निरोधन हो जायेगा। इस प्रकार मस्तिष्क की कोशिका द्वारा ग्लूटामिन के संश्लेषण के प्रयोगों द्वारा ऐसे प्रक्रमों पर, जिनमें ऊर्जा की आवश्यकता हो औषधियों के प्रभाव की परीक्षा की जा सकती है। 2,4 डाईनाइट्रोफीनॉल तथा सैलिसिलेट ग्लूटामिन के संश्लेषण को अवनमित कर देते है, परन्तु ऑक्सीजन के उपभोग पर इनका कोई प्रभाव नहीं पड़ता। डायर[15] ने गिनीपिग के बच्चों के मस्तिष्क की कोशिकाओं द्वारा ग्लूटामिन के संश्लेषण एंव आक्सीजन के उपभोग पर अनेक धातुओ के कीलेटों के प्रभाव का अध्ययन किया है। उन्होंने देखा कि 1,10 फेनैन्थ्रोलीन तथा 2,2′ वाइपिरीडीन के रूथेनियम(II), ऑस्मियम(II) तथा निकेल(II) के कीलेटों का 0.1 मिली मोल सान्द्रता तक, इन अभिक्रियाओं पर कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ता। कोबाल्ट(II) तथा जिंक(II) के कीलेट इन दोनों अभिक्रियाओं को अवनमित कर देते हैं जबकि आयरन(II) के कीलेट ग्लूटामिन के संश्लेषण को तो निरोधित कर देते हैं परन्तु ऑक्सीजन के उपभोग पर उनका कोई प्रभाव नहीं होता है।

चूहों पर प्रयोगों के द्वारा रूधिर में ग्लूकोस की सान्द्रता पर भी धातुओं के कीलेटों के प्रभाव का अध्ययन किया गया है। कोच11 ने देखा कि एथिलीन डाइएमीन के स्थायी धनायनिक कीलेटों $[M(en)_3]^{3+}$ [M=Co(III), Rh(III),Os(III)] के द्वारा रूधिर में ग्लूकोस की मात्रा अधिक काल के लिए बहुत अधिक बढ़ जाती है (हाइपरग्लाइसीमिया), यद्यपि अग्न्याशय की α कोशिकाओं पर इनका कोई प्रभाव नहीं पड़ता। नेल्सन[16] ने इसी प्रकार के अध्ययन कुछ सामान्य तथा ऐसे चूहों पर किये जिनकी एड्रिनल, मध्य एड्रिनल अथवा पिट्यूटरी ग्रन्थियाँ शल्य क्रिया द्वारा निकाल दी गयी थी। इनसे वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि रूधिर में ग्लूकोज सान्द्रता की वृद्धि मध्य एड्रिनल ग्रन्थि के द्वारा होती प्रतीत होती है और सम्भवतः इसका कारण यह है कि रूधिर में संचरित एड्रिनलीन की मात्रा बढ़ जाती है जिसके फलस्वरूप यकृत का ग्लाइकोजन ग्लूकोस में अपघटित हो जाता है और इस प्रकार रूधिर में ग्लूकोस की मात्रा बढ़ जाती है।

संदर्भ

1. एल्बर्ट(1960) सेलेक्टिव टॉक्सिसिटी, मेथ्युएन, लन्दन, यू0 के0।
2. एल्बर्ट,रूब्बों, गोल्डेकर तथा बैल्फोर(1947) ब्रिट0 जर्न0 एक्सपेरी0 पैथोलॉजी, खण्ड 28, पृ0 69।
3. एल्बर्ट(1958) द स्ट्रैटेजी ऑफ केमोथेरैपी, सिम्पोजियम सोसा0 जर्न0 माइक्रोबायोलॉजी, खण्ड 8, पृ0 112।
4. एल्बर्ट तथा रीस(1956) नेचर, खण्ड 177, पृ0 433।
5. शुबर्ट (1960) मेटल बाइंडिंग इन मेडिसिन(सम्पादकः सेवेन) पृष्ठ 325, लिप्पिनकॉट, फिलाडेल्फिया, पेन्सिलवेनिया, यू0 एस0 ए0।
6. रीड; वाट्सन; क्रोकन तथा स्प्राउल(1951) ब्रिट0 मेडि0 जर्न0, खण्ड 2, पृ0 321।
7. सेवेन(1960) मेटल बाइडिंग इन मेडिसिन, पृष्ठ 95, लिप्पिनकॉट, फिलाडेल्फिया, पेन्सिलवेनिया, यू0 एस0 ए0।
8. कोच(1955) नेचर, खण्ड 175, पृ0 856
9. पाउलिंग(1948) जर्न0 केमि0 सोसा0, पृ0 1461।

10. शुल्मेन तथा डायर(1964) मेटल कीलेट्स इन बायोलॉजीकल सिस्टम्स(कीलेटिंग एजेन्ट्स एण्ड मेटल कीलेट्स, सम्पादकः डायर तथा मेलार) पृष्ठ 398–399, एकेडेमिक प्रेस, न्यूर्याक तथा लन्दन।
11. कोच; रोगर्स; डायर तथा ग्यारफास(1957) ऑस्ट्रेलियन जर्न0 बायोला0 साइ0, खण्ड 10, पृ0 342।
12. बेकारी(1941) बोल0 सोसा0 इटैल0 बायोला0 स्पर0, खण्ड 16, पृ0 216।
13. क्रेब्स(1935) बायोकेमि0 जर्न0, खण्ड 29, पृ0 1951।
14. स्पेक(1941) जर्न0 बायोला0 केमि0, खण्ड 168, पृ0 403।
15. डायर; मेसर; शुल्मैन तथा राइट(1964) संदर्भ 10, पृष्ठ 405।
16. नेल्सन, शुल्मैन, तथा राइट(1964) संदर्भ 10, पृ0 414।